



SWARNRUDRA: An International Multidisciplinary Journal of Academic Research

<https://swarnrudrajournal.com/>

e-ISSN:3140-0108

Publisher:Swarnrudra Publication

Vol.1, Issue 2, August-September 2026

DOI:<https://doi.org/10.5281/10.5281/zenodo.23315342>



RESEARCHARTICLE

भारतेन्दु युगीन हिन्दी और समीर युगीन संताली साहित्य में सामाजिक-सांस्कृतिक चेतना

¹*फुलजेंसी टुडू , ²डॉ. स्मृतिकुमारी 

¹रिसर्च स्कॉलर, हिंदी विभाग, एसकेएमयू, दुमका, झारखण्ड, भारत

²एसोसिएट प्रोफेसर (सह एचओडी), हिंदी विभाग, गोड्डा कॉलेज गोड्डा, एसकेएमयू, दुमका, झारखण्ड, भारत

सारांश -

भारतीय साहित्य में सामाजिक-सांस्कृतिक चेतना का विकास ऐतिहासिक परिस्थितियों, सामाजिक संरचनाओं तथा सामुदायिक जीवन के अनुभवों के साथ हुआ है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में भारतेन्दु युग आधुनिक चेतना, सामाजिक परिवर्तन, राष्ट्रभावना और सांस्कृतिक आत्मबोध का महत्वपूर्ण दौर माना जाता है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तथा उनके समकालीन रचनाकारों ने सामाजिक कुरीतियों, आर्थिक असमानता, स्त्रीशिक्षा, भाषा के विकास और राष्ट्रीय चेतना जैसे प्रश्नों को साहित्यिक अभिव्यक्ति प्रदान की। पत्रकारिता भी सामाजिक जागरण का प्रभावी माध्यम बनी। इसके विपरीत, संताली साहित्य के समीर युग में सामाजिक चेतना का निर्माण आदिवासी अस्मिता, सामुदायिक जीवनमूल्यों, सांस्कृतिक संरक्षण और सामाजिक-आर्थिक शोषण के अनुभवों के संदर्भ में हुआ। संताली भाषा के विकास तथा ओल चिकी लिपि के विस्तार ने भाषायी गौरव और सांस्कृतिक स्वाभिमान को सुदृढ़ किया। इस साहित्य में भूमि एवं प्रकृति से संबंध, भाषायी अधिकार, शिक्षा और बाहरी हस्तक्षेप के विरुद्ध प्रतिरोध की चेतना प्रमुखता से अभिव्यक्त हुई।

प्रस्तुत शोधपत्र में दोनों साहित्यिक परंपराओं की सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना का तुलनात्मक विवेचन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि दोनों में सामाजिक सुधार, जनजागरण, भाषायी चेतना, सांस्कृतिक अस्मिता तथा शोषण के प्रतिरोध जैसे व्यापक सरोकार समान हैं, किंतु उनकी अभिव्यक्ति ऐतिहासिक और सामाजिक संदर्भों के अनुसार भिन्न है।

मुख्यशब्द:

भारतेन्दुयुग, समीरयुग, संतालीसाहित्य, हिन्दीसाहित्य, सामाजिकचेतना, सांस्कृतिकचेतना, आदिवासीअस्मिता, राष्ट्रीयचेतना, भाषाएवंलिपि।

ARTICLE HISTORY:

Received: 25.08.2026

Revised: 05.09.2026

Accepted: 15.09.2026

Published Online: 25.09.2026

CITATION

Phuljency Tudu., (2026).
भारतेन्दुयुगीनहिन्दीऔरसमीरयुगीनसं
तालीसाहित्यमेंसामाजिक-
सांस्कृतिकचेतना. *SWARNRUDRA:
An International
Multidisciplinary Journal of
Academic Research*, 1(2), 83-
91.
[https://doi.org/10.5281/10.5281/
zenodo.23315342](https://doi.org/10.5281/10.5281/zenodo.23315342)

प्रस्तावना

साहित्य किसी समाज की सामूहिक चेतना, जीवन-शैली तथा उसकी सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों को समझने का सशक्त माध्यम माना जाता है। किसी कालखंड में राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तर पर घटित होने वाले परिवर्तन साहित्य की विषयवस्तु, दृष्टिकोण और अभिव्यक्ति के स्वरूप को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। साहित्यकार अपने परिवेश में घटित घटनाओं, सामाजिक

विसंगतियों, समस्याओं और सामूहिक अनुभवों को अपनी संवेदनशीलता तथा सृजनात्मक दृष्टि के माध्यम से साहित्यिक रूप प्रदान करता है। इस दृष्टि से साहित्य का महत्व केवल उसकी भाषिक संरचना, शैलीगत विशेषताओं और कलात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह किसी युग की सामाजिक व्यवस्था, प्रचलित मान्यताओं, अंतर्विरोधों, संघर्षों तथा परिवर्तनशील प्रवृत्तियों को समझने का महत्वपूर्ण आधार भी प्रस्तुत करता है। इस प्रकार साहित्य समाज में विद्यमान समस्याओं और परिस्थितियों को प्रतिबिंबित करने के साथ-साथ सामाजिक चेतना, जागरूकता तथा परिवर्तन की आकांक्षा को विकसित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हिन्दी साहित्य के विकासक्रम में भारतेन्दु युग का विशिष्ट स्थान है। इसे हिन्दी साहित्य की पारंपरिक प्रवृत्तियों से आधुनिक चेतना और नवीन सामाजिक दृष्टि की ओर संक्रमण के एक महत्वपूर्ण चरण के रूप में देखा जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारतीय समाज व्यापक राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा था। 1857 के विद्रोह के पश्चात भारत में ब्रिटिश शासन का नियंत्रण और अधिक सुदृढ़ हो गया, जिसके परिणामस्वरूप भारतीय सामाजिक जीवन पर औपनिवेशिक प्रभाव बढ़ने लगा। इसी समय आधुनिक शिक्षा के प्रसार, पाश्चात्य चिंतन के प्रभाव, मुद्रण तकनीक के विकास तथा समाचार-पत्रों और पत्र-पत्रिकाओं के विस्तार ने समाज में नवीन विचारों और बौद्धिक चेतना के विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ निर्मित कीं। हालाँकि इन परिवर्तनों के साथ भारतीय समाज अनेक गंभीर समस्याओं से भी जूझ रहा था। जातिगत असमानता, सामाजिक रूढ़ियाँ, विभिन्न कुप्रथाएँ, आर्थिक विषमता तथा सांस्कृतिक असुरक्षा जैसी स्थितियाँ सामाजिक विकास के मार्ग में बाधक बनी हुई थीं। ऐसी ऐतिहासिक और सामाजिक पृष्ठभूमि में हिन्दी साहित्य ने अपने पारंपरिक दायरे से बाहर निकलकर समकालीन जीवन की वास्तविकताओं को अभिव्यक्ति देना आरंभ किया। साहित्य में सामाजिक सुधार, जनजागरण, राष्ट्रीय भावना और आधुनिक दृष्टिकोण से संबंधित विषयों को प्रमुखता प्राप्त हुई। इस प्रकार भारतेन्दु युगीन हिन्दी साहित्य केवल साहित्यिक परिवर्तन का प्रतिनिधि नहीं था, बल्कि उसने तत्कालीन भारतीय समाज में विकसित हो रही सामाजिक चेतना, राष्ट्रीय भावना और परिवर्तन की आकांक्षा को स्वर प्रदान करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने तत्कालीन परिवर्तित सामाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों को अपनी साहित्यिक रचनाशीलता के माध्यम से सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान की। उन्होंने कविता, नाटक, निबंध और पत्रकारिता सहित विभिन्न साहित्यिक माध्यमों को अपनाकर अपने समय की सामाजिक विसंगतियों, राजनीतिक परिस्थितियों तथा राष्ट्रीय जीवन से जुड़े प्रश्नों को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया। उनके साहित्य में सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा, देशभक्ति, राष्ट्रीय चेतना, स्वाभिमान, भाषा के प्रति जागरूकता तथा सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण जैसे अनेक महत्वपूर्ण पक्ष स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। 'भारत दुर्दशा' और 'नीलदेवी' जैसी उनकी प्रमुख कृतियों में तत्कालीन भारतीय समाज और देश की परिस्थितियों के प्रति उनकी गहरी संवेदनशीलता तथा सजग दृष्टिकोण अभिव्यक्त हुआ है। भारतेन्दु का साहित्य केवल पाठकों के मनोरंजन तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उसमें सामाजिक यथार्थ को उजागर करने, जनमानस को उसकी परिस्थितियों के प्रति जागरूक बनाने तथा समाज में परिवर्तन और नवचेतना की भावना विकसित करने का उद्देश्य भी निहित था।

भारतेन्दु युग के साहित्य में राष्ट्रीय चेतना और सामाजिक सुधार के साथ-साथ भारतीय भाषा, संस्कृति तथा सांस्कृतिक अस्मिता के प्रति जागरूकता का भी विशेष महत्व रहा। इस काल के साहित्यकारों ने समाज में प्रचलित रूढ़ियों, अंधविश्वासों और विभिन्न सामाजिक कुरीतियों को आलोचनात्मक दृष्टि से देखा तथा शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन, आत्मसम्मान और जागृति जैसे विचारों को व्यापक रूप से अभिव्यक्त किया। औपनिवेशिक शासन के परिणामस्वरूप उत्पन्न राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियों के प्रति असंतोष के साथ-साथ भारतीय सांस्कृतिक परंपराओं एवं मूल्यों के संरक्षण की आकांक्षा भी तत्कालीन साहित्य में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। इस दृष्टि से भारतेन्दु युग को आधुनिक हिन्दी साहित्य में सामाजिक जागरण, राष्ट्रीय चेतना तथा सांस्कृतिक पुनर्जागरण की आधारभूमि निर्मित करने वाला महत्वपूर्ण काल माना जा सकता है। इसके विपरीत, संताली साहित्य में सामाजिक चेतना का विकास एक विशिष्ट आदिवासी सामाजिक, सांस्कृतिक और प्राकृतिक परिवेश के संदर्भ में हुआ। संताली समुदाय का जीवन लंबे समय से प्रकृति, जल-जंगल-जमीन, सामुदायिक जीवन, लोकपरंपराओं तथा पारंपरिक ज्ञान-व्यवस्था से गहरे रूप में संबद्ध रहा है। संताली साहित्य की आरंभिक परंपरा मुख्यतः मौखिक रही, जिसके अंतर्गत लोकगीतों, लोककथाओं, मिथकीय आख्यानों, कहावतों और सामुदायिक स्मृतियों का विशेष स्थान रहा। इन मौखिक अभिव्यक्तियों के माध्यम से संताली समुदाय ने अपने इतिहास, सामाजिक अनुभवों, जीवन-मूल्यों, प्रकृति के साथ संबंधों तथा सांस्कृतिक विरासत को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सुरक्षित और हस्तांतरित किया। कालांतर में संताली भाषा में लिखित साहित्य का विकास हुआ, जिसके परिणामस्वरूप समुदाय के सामाजिक जीवन, सांस्कृतिक पहचान, प्रकृति-संबंध, विस्थापन, अधिकारों तथा अन्य समकालीन प्रश्नों को साहित्यिक अभिव्यक्ति प्राप्त होने लगी।

समीर युगीन संताली साहित्य में सामाजिक चेतना के स्वरूप को समझने के लिए संताली समाज के परिवर्तित जीवन-परिदृश्य तथा उसके विविध संघर्षों का अध्ययन आवश्यक है। औपनिवेशिक व्यवस्था के प्रभाव, भूमि से जुड़े विवादों, आर्थिक शोषण, शिक्षा के सीमित अवसरों और

सांस्कृतिक हस्तक्षेप जैसी परिस्थितियों ने संताली समुदाय में अपने अधिकारों, सामाजिक अस्तित्व और सामूहिक अस्मिता के प्रति जागरूकता को व्यापक रूप प्रदान किया। इस साहित्य में जहाँ एक ओर बाहरी शक्तियों द्वारा किए जाने वाले शोषण, अन्याय और दमन के विरुद्ध प्रतिरोध की भावना दिखाई देती है, वहीं दूसरी ओर समाज के भीतर विद्यमान रूढ़ियों, विसंगतियों और कमजोरियों के प्रति भी आलोचनात्मक दृष्टिकोण विकसित होता है। शिक्षा के प्रसार, सामाजिक परिवर्तन और सुधार की आवश्यकता को रेखांकित करते हुए संताली साहित्य अपनी पारंपरिक जीवन-पद्धति, सामुदायिक संबंधों तथा सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण की चिंता को भी समान रूप से अभिव्यक्त करता है। इस प्रकार, समीर युगीन संताली साहित्य में सामाजिक चेतना केवल विरोध और प्रतिरोध तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह सामाजिक परिवर्तन, आत्मबोध, सांस्कृतिक अस्मिता तथा परंपरागत मूल्यों के संरक्षण के बीच संतुलन स्थापित करने वाली व्यापक चेतना के रूप में सामने आती है।

संताली साहित्य की सामाजिक चेतना के संदर्भ में भाषा और लिपि का प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। संताली भाषा के संरक्षण, संवर्धन तथा उसकी विशिष्ट भाषायी पहचान को सुदृढ़ करने में ओल चिकी लिपि का विकास एक ऐतिहासिक एवं महत्वपूर्ण उपलब्धि माना जाता है। किसी भी समुदाय के लिए भाषा मात्र विचारों और भावनाओं के आदान-प्रदान का साधन नहीं होती, बल्कि वह उसके इतिहास, लोकपरंपराओं, सांस्कृतिक स्मृतियों, विश्वासों तथा सामूहिक जीवनानुभवों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी संरक्षित करने का माध्यम भी होती है। इसी कारण संताली भाषा और लिपि का प्रश्न समुदाय की सांस्कृतिक अस्मिता, आत्मपहचान और आत्मसम्मान से गहराई से जुड़ जाता है। संताली साहित्य ने इस भाषायी एवं सांस्कृतिक अस्मिता को प्रभावशाली अभिव्यक्ति प्रदान करने के साथ-साथ समुदाय की समृद्ध मौखिक परंपरा, लोकस्मृतियों, सांस्कृतिक विरासत तथा पारंपरिक ज्ञान को संरक्षित और हस्तांतरित करने में भी उल्लेखनीय योगदान दिया है।

भारतेन्दु युगीन हिन्दी साहित्य तथा समीर युगीन संताली साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है कि दोनों साहित्यिक परंपराओं का विकास भिन्न-भिन्न ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों में हुआ, फिर भी दोनों ने साहित्य को सामाजिक जीवन से जोड़ते हुए उसकी परिवर्तनकारी भूमिका को विशेष महत्व प्रदान किया। भारतेन्दु युग के हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक सुधार, भाषा-जागरण और सांस्कृतिक पुनर्जागरण जैसी प्रवृत्तियाँ प्रमुख रूप से उभरकर सामने आती हैं। इसके विपरीत, संताली साहित्य में सामाजिक सरोकारों के साथ-साथ आदिवासी अस्मिता, जल-जंगल-जमीन, प्रकृति-संरक्षण, भाषा तथा सांस्कृतिक अधिकारों से जुड़े प्रश्नों को विशेष अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है। दोनों साहित्यिक परंपराओं में जनजागरण, सामाजिक हित, सुधार की भावना, सांस्कृतिक पहचान की रक्षा तथा शोषण और अन्याय के विरुद्ध प्रतिरोध जैसी समान चेतनाएँ दिखाई देती हैं, किंतु इनकी अभिव्यक्ति संबंधित समाजों के विशिष्ट ऐतिहासिक अनुभवों और परिस्थितियों के अनुरूप अलग-अलग रूपों में हुई है।

इस प्रकार भारतेन्दु युगीन हिन्दी साहित्य और समीर युगीन संताली साहित्य का तुलनात्मक अनुशीलन भारतीय साहित्य में विद्यमान सामाजिक, सांस्कृतिक और वैचारिक विविधता को समझने की व्यापक दृष्टि प्रदान करता है। इसके माध्यम से दोनों साहित्यिक परंपराओं के अंतर्संबंध, साम्य और वैषम्य को स्पष्ट करने के साथ यह भी विश्लेषित किया जा सकता है कि विभिन्न सामाजिक परिवेशों में साहित्य किस प्रकार जनसमुदाय के अनुभवों, संघर्षों, अस्मिताबोध तथा सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षाओं को स्वर प्रदान करता है। अतः यह तुलनात्मक अध्ययन न केवल दो विशिष्ट साहित्यिक धाराओं की विशेषताओं को रेखांकित करता है, बल्कि भारतीय समाज में साहित्य की सामाजिक भूमिका, सांस्कृतिक चेतना और परिवर्तनकारी संभावनाओं को समझने का एक सार्थक आधार भी प्रस्तुत करता है।

ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संदर्भ

भारतेन्दु युग तथा समीर युग की साहित्यिक चेतना और प्रवृत्तियों का सम्यक् अध्ययन करने के लिए उन ऐतिहासिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों को समझना आवश्यक है, जिनके मध्य इन दोनों साहित्यिक धाराओं ने अपना स्वरूप ग्रहण किया। भारतेन्दु युग हिन्दी साहित्य के आधुनिक विकास की आरंभिक महत्वपूर्ण अवस्था का परिचायक है। इस युग की साहित्यिक चेतना का निर्माण विशेष रूप से 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम के पश्चात् उत्पन्न राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों की पृष्ठभूमि में हुआ। उस समय भारतीय समाज ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के प्रभाव में था। पश्चिमी शिक्षा के प्रसार, आधुनिक चिंतन के आगमन, मुद्रण तकनीक के विकास तथा पत्रकारिता के विस्तार ने समाज के विभिन्न वर्गों में नवीन विचारधारा और जागरूकता को जन्म दिया। दूसरी ओर सामाजिक रूढ़ियों, कुप्रथाओं, आर्थिक विषमता तथा औपनिवेशिक शोषण जैसी अनेक समस्याएँ भारतीय जीवन को प्रभावित कर रही थीं।

ऐसी परिवर्तनशील एवं संक्रमणशील परिस्थितियों में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (1843-1885) का साहित्यिक व्यक्तित्व विशेष रूप से महत्वपूर्ण बनकर सामने आया। उन्होंने हिन्दी साहित्य को केवल मनोरंजन अथवा सौंदर्याभिव्यक्ति तक सीमित न रखकर उसे तत्कालीन सामाजिक जीवन और

उसकी वास्तविक समस्याओं के साथ जोड़ने का प्रयास किया। भारतेन्दु साहित्यकार होने के साथ पत्रकार, सामाजिक विचारक और जन-जागरण के समर्थक भी थे। उनके प्रभाव से प्रेमघन, प्रतापनारायण मिश्र आदि रचनाकारों ने भी हिन्दी साहित्य में आधुनिक दृष्टि को विकसित किया। इन साहित्यकारों ने रीतिकाल की मुख्यतः शृंगार-केंद्रित साहित्यिक प्रवृत्तियों से आगे बढ़ते हुए साहित्य को राष्ट्रभावना, सामाजिक परिवर्तन, शिक्षा, जनचेतना, भाषा-विकास तथा समकालीन समस्याओं के प्रति संवेदनशील बनाने का कार्य किया। फलतः हिन्दी साहित्य में आधुनिकता, सामाजिक उत्तरदायित्व और राष्ट्रीय चेतना की सुदृढ़ आधारभूमि तैयार हुई।

इसके विपरीत संताली साहित्य का विकास एक विशिष्ट आदिवासी सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश में हुआ, जहाँ मनुष्य का संबंध प्रकृति, भूमि, जंगल, सामुदायिक जीवन और पारंपरिक सांस्कृतिक मान्यताओं के साथ अत्यंत गहरा रहा है। संताली भाषा ऑस्ट्रोएशियाटिक भाषा-परिवार की मुंडा शाखा से संबद्ध है तथा इसका व्यापक प्रयोग झारखंड, पश्चिम बंगाल, ओडिशा, बिहार और असम के विभिन्न क्षेत्रों में होता है। संताली साहित्य की मूल अभिव्यक्ति लिखित परंपरा से पूर्व लोक-सांस्कृतिक में दिखाई देती है। लोकगीत, लोककथाएँ, मिथकीय कथाएँ, कहावतें, पारंपरिक आख्यान तथा मौखिक ज्ञान-परंपरा इसके प्रमुख आधार रहे हैं। इन माध्यमों के द्वारा संताली समुदाय ने अपनी सामूहिक स्मृतियों, जीवनानुभवों, सामाजिक मान्यताओं और सांस्कृतिक मूल्यों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी संरक्षित किया।

आधुनिक समय में संताली साहित्य ने मौखिक परंपरा से आगे बढ़कर लिखित साहित्य का स्वरूप ग्रहण किया और इसके माध्यम से सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक प्रश्नों को अधिक व्यापक अभिव्यक्ति प्राप्त हुई। इसी ऐतिहासिक विकासक्रम में समीर युग का विशेष महत्व स्थापित होता है। डॉ. डोमन साहू 'समीर' ने संताली भाषा और साहित्य के विकास के साथ-साथ समाज में जागरूकता उत्पन्न करने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनके समय का संताली समाज अनेक प्रकार के सामाजिक और आर्थिक संकटों से गुजर रहा था। औपनिवेशिक शासन का हस्तक्षेप, जमींदारों और साहूकारों द्वारा शोषण, भूमि से वंचित किए जाने की प्रक्रिया, आर्थिक विपन्नता तथा सांस्कृतिक विस्थापन जैसी परिस्थितियों ने संताली समुदाय के जीवन को गहराई से प्रभावित किया।

संताली भाषा के विकास में ईसाई मिशनरियों की भी एक महत्वपूर्ण भूमिका रही। उन्होंने शिक्षा तथा लेखन के प्रसार के लिए संताली भाषा को रोमन लिपि में लिखने का प्रयास किया। किंतु रघुनाथ मुर्मू द्वारा 1925 में विकसित 'ओल चिकी' लिपि ने संताली भाषा को एक विशिष्ट और स्वतंत्र लिपिगत पहचान प्रदान की। इससे संताली समुदाय की भाषायी अस्मिता को मजबूती मिली और भाषा के साथ जुड़े सांस्कृतिक स्वाभिमान को भी नई दिशा प्राप्त हुई। इस प्रकार लिपि का विकास केवल भाषायी परिवर्तन नहीं था, बल्कि वह संताली समाज की सांस्कृतिक पहचान, आत्मसम्मान और अधिकार-बोध के निर्माण की प्रक्रिया का भी महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया।

डॉ. डोमन साहू 'समीर' ने 'होड़ सोम्बाद' जैसी पत्रिकाओं के माध्यम से संताली भाषा में साहित्यिक रचनाओं, विचारों और सामाजिक मुद्दों के प्रसार को प्रोत्साहित किया। उनके प्रयासों से साहित्य को केवल कलात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम न मानकर सामाजिक जागरण, सांस्कृतिक संरक्षण और सामुदायिक चेतना के विकास का साधन बनाने की प्रवृत्ति को बल मिला। इस दृष्टि से समीर युग संताली साहित्य में सामाजिक सरोकारों तथा सामुदायिक आत्मबोध के विस्तार का महत्वपूर्ण चरण माना जा सकता है।

इस प्रकार भारतेन्दु युगीन हिन्दी साहित्य और समीर युगीन संताली साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमियाँ यद्यपि एक-दूसरे से भिन्न हैं, फिर भी दोनों में साहित्य को सामाजिक जीवन के साथ जोड़ने की समान प्रवृत्ति दिखाई देती है। भारतेन्दु युग में औपनिवेशिक परिस्थितियों, सामाजिक रूढ़ियों और राष्ट्रीय पराधीनता के बीच राष्ट्रभावना, सामाजिक सुधार, शिक्षा, भाषा-जागरण और आधुनिक चेतना को साहित्य में प्रमुख स्थान मिला। इसके विपरीत समीर युगीन संताली साहित्य ने आदिवासी समुदाय की विशिष्ट सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों के अनुरूप अस्मिता, भूमि, भाषा, सांस्कृतिक अधिकार, सामुदायिक अस्तित्व तथा शोषण के विरुद्ध संघर्ष को अपनी अभिव्यक्ति का महत्वपूर्ण आधार बनाया। अतः दोनों युगों की साहित्यिक चेतना को उनके संबंधित सामाजिक परिवेश और ऐतिहासिक अनुभवों के संदर्भ में देखने पर स्पष्ट होता है कि साहित्य ने अपने-अपने समाज में परिवर्तन, जागरूकता, आत्मपहचान और अधिकार-बोध को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

भारतेन्दुयुगीनहिन्दीसाहित्यमेंसामाजिक-सांस्कृतिकचेतना

भारतेन्दु युग के हिन्दी साहित्य की सबसे उल्लेखनीय विशेषताओं में साहित्यिक सृजन के साथ-साथ समकालीन समाज, राष्ट्र और सांस्कृतिक जीवन के प्रति विकसित होती सजगता प्रमुख है। 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम की विफलता के पश्चात् भारतीय समाज में राजनीतिक असंतोष और निराशा का वातावरण उत्पन्न हुआ। ऐसी परिस्थितियों में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और उनके समकालीन साहित्यकारों ने अपने लेखन के माध्यम से राष्ट्रीय गौरव, आत्मसम्मान तथा स्वदेश के प्रति अनुराग की भावना को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया। इस काल की रचनाओं में तत्कालीन

राजनीतिक परिस्थितियों, औपनिवेशिक शासन के प्रभाव तथा भारतीय समाज की विभिन्न समस्याओं के प्रति गहरी संवेदनशीलता दिखाई देती है।

इस युग की राष्ट्रीय चेतना के साथ भाषा संबंधी जागरूकता भी अत्यंत महत्वपूर्ण थी। भारतेन्दु का प्रसिद्ध कथन—“निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल”—उनकी उस विचारधारा को अभिव्यक्त करता है, जिसमें मातृभाषा को सामाजिक, सांस्कृतिक और बौद्धिक उन्नति का मूल आधार माना गया है। उनके दृष्टिकोण में विदेशी शासन का प्रभाव केवल राजनीतिक सत्ता अथवा आर्थिक व्यवस्था तक सीमित नहीं था, बल्कि भारतीय भाषाओं, सांस्कृतिक परंपराओं और सामाजिक मूल्यों पर भी उसका व्यापक प्रभाव पड़ रहा था। परिणामतः उनके साहित्य में औपनिवेशिक व्यवस्था के प्रति असंतोष के साथ-साथ भारतीय समाज, संस्कृति और राष्ट्रीय अस्मिता के संरक्षण की चिंता भी स्पष्ट रूप से व्यक्त हुई। ‘भारत दुर्दशा’, ‘नीलदेवी’ आदि रचनाओं में तत्कालीन भारत की राजनीतिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों का विभिन्न साहित्यिक रूपों में प्रभावशाली चित्रण मिलता है।

भारतेन्दु युग की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता सामाजिक सुधार की भावना थी। उस समय भारतीय समाज अनेक सामाजिक कुरीतियों और रूढ़ियों से प्रभावित था। बाल-विवाह, पर्दा-प्रथा, स्त्रियों की शिक्षा का अभाव, अस्पृश्यता, सामाजिक रूढ़िवाद तथा धार्मिक आडंबर जैसी समस्याएँ व्यापक रूप से विद्यमान थीं। इस युग के साहित्यकारों ने इन सामाजिक विसंगतियों को केवल स्वीकार नहीं किया, बल्कि उनके प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण विकसित किया। उनके विचार में राष्ट्र की वास्तविक उन्नति तभी संभव हो सकती है, जब राजनीतिक जागरूकता के साथ सामाजिक जीवन में व्याप्त असमानताओं, रूढ़ियों और कुप्रथाओं का भी निराकरण किया जाए। इस दृष्टि से साहित्य को सामाजिक चेतना और सुधार का प्रभावशाली माध्यम बनाया गया।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने साहित्य के साथ पत्रकारिता को भी जनजागरण का महत्वपूर्ण साधन बनाया। ‘कविवचनसुधा’ और ‘हरिश्चन्द्र मैगजीन’ जैसी पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से उन्होंने समकालीन राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रश्नों पर विचार प्रस्तुत किए तथा सुधारवादी चेतना को व्यापक पाठक-समुदाय तक पहुँचाने का प्रयास किया। उनके साहित्य और पत्रकारिता दोनों में अपने समय की परिस्थितियों के प्रति सजगता, समाज के प्रति उत्तरदायित्व और परिवर्तन की आकांक्षा दिखाई देती है। इस प्रकार साहित्य उनके लिए केवल मनोरंजन या कलात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं था, बल्कि जनचेतना को विकसित करने वाला सक्रिय माध्यम भी था।

इस काल में भारतीय सांस्कृतिक परंपरा के प्रति भी एक नवीन और जागरूक दृष्टिकोण विकसित हुआ। भारतेन्दु तथा उनके सहयोगी साहित्यकारों ने भारतीय इतिहास, संस्कृति, परंपराओं और साहित्यिक विरासत के प्रति गौरव की भावना को सुदृढ़ किया। आधुनिक शिक्षा और पश्चिमी सांस्कृतिक प्रभाव के बढ़ते प्रसार के बीच भारतीय सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखने की आवश्यकता पर उन्होंने विशेष बल दिया। उनके साहित्य में परंपरा और आधुनिकता के बीच संवाद स्थापित करने का प्रयास दिखाई देता है। वे आधुनिक विचारों को स्वीकार करते हुए भी भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की उपेक्षा के पक्षधर नहीं थे।

भारतेन्दु युग हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास की दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। इस समय हिन्दी गद्य और पद्य को नई अभिव्यक्ति-क्षमता प्राप्त हुई तथा नाटक, निबंध, पत्रकारिता, यात्रा-वृत्तांत और अन्य साहित्यिक विधाओं के विकास को गति मिली। साहित्यिक भाषा में समकालीन जीवन की समस्याओं, सामाजिक अनुभवों और राष्ट्रीय भावनाओं को अभिव्यक्त करने की क्षमता विकसित हुई। इस प्रकार साहित्य और समाज के बीच संबंध अधिक सशक्त हुआ तथा हिन्दी साहित्य आधुनिक सामाजिक चेतना के निर्माण का प्रभावी माध्यम बनकर उभरा।

अतः भारतेन्दु युगीन हिन्दी साहित्य को केवल हिन्दी साहित्य के आधुनिक विकास का प्रारंभिक चरण मानना पर्याप्त नहीं होगा। यह काल राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक सुधार, भाषायी स्वाभिमान और सांस्कृतिक पुनर्जागरण की परस्पर संबद्ध प्रवृत्तियों का महत्वपूर्ण चरण था। इस युग के साहित्यकारों ने साहित्य को अपने समय की राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक चुनौतियों से जोड़ते हुए जनमानस में जागरूकता उत्पन्न करने का प्रयास किया। इसी कारण भारतेन्दु युग आधुनिक हिन्दी साहित्य में परिवर्तन, जागरण और राष्ट्रीय-सामाजिक चेतना के विकास की दृष्टि से विशेष महत्व रखता है।

समीरयुगीनसंतालीसाहित्यमेंसामाजिक-सांस्कृतिकचेतना

समीर युग के संताली साहित्य में सामाजिक तथा सांस्कृतिक चेतना का स्वर आदिवासी समाज की पहचान, अस्तित्व, अधिकार-बोध और परिवर्तन की आकांक्षा के रूप में प्रमुखता से उभरता है। संताली समुदाय ने अपने इतिहास में औपनिवेशिक हस्तक्षेप, भूमि एवं प्राकृतिक संसाधनों पर अधिकार के प्रश्न, आर्थिक शोषण और बाहरी सांस्कृतिक प्रभाव जैसी अनेक परिस्थितियों का सामना किया। इन ऐतिहासिक एवं सामाजिक अनुभवों का प्रभाव संताली साहित्य की विषयवस्तु और दृष्टिकोण पर भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। इस काल की रचनाओं में सामुदायिक जीवन,

सामाजिक संघर्ष, सामूहिक अनुभव तथा भविष्य के प्रति आकांक्षाओं को विशेष स्थान मिला। साहित्यकारों ने अपनी रचनात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम से समाज में आत्मचेतना विकसित करने और समुदाय को उसके अधिकारों के प्रति सजग बनाने का प्रयास किया। समीर तथा उनके समकालीन साहित्यकारों की रचनात्मक चेतना में बाहरी शोषण और सामाजिक अन्याय के प्रतिरोध के साथ-साथ सांस्कृतिक विरासत की रक्षा की भावना भी महत्वपूर्ण रही। संताली समाज की सांस्कृतिक परंपराओं में पूर्वजों से प्राप्त ज्ञान, अनुभव और जीवन-दृष्टि का विशेष महत्व है, जिसे 'हैप्रम को बिदिया' की संकल्पना के माध्यम से समझा जा सकता है। इसी प्रकार लोकाचार, लोकविश्वास, लोकगीत, लोककथाएँ और मौखिक परंपराएँ सामुदायिक स्मृति तथा सांस्कृतिक निरंतरता के प्रमुख आधार रहे हैं। इनके संरक्षण के माध्यम से संताली समुदाय ने अपने अतीत, सामाजिक मूल्यों, जीवन-पद्धति और सांस्कृतिक पहचान को पीढ़ी-दर-पीढ़ी सुरक्षित रखने का कार्य किया। इस दृष्टि से समीर युगीन संताली साहित्य को केवल कलात्मक या मनोरंजनपरक रचनाओं तक सीमित करके देखना उचित नहीं होगा; इसमें सामाजिक जागरण, सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा तथा अन्याय के विरुद्ध सामूहिक प्रतिरोध की भावना भी अंतर्निहित है।

इस साहित्यिक काल की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता सामाजिक सुधार और आधुनिक विचारों के प्रति बढ़ती हुई स्वीकार्यता है। रघुनाथ मुर्मू, समीर तथा अन्य साहित्यकारों और विचारकों ने शिक्षा को समाज के विकास एवं परिवर्तन का प्रभावशाली माध्यम माना। उन्होंने संताली समाज में शैक्षिक चेतना के विस्तार तथा नई पीढ़ी को ज्ञान से जोड़ने की आवश्यकता पर बल दिया। इसके साथ ही मद्यपान, लैंगिक असमानता और अन्य सामाजिक कुरीतियों तथा आंतरिक समस्याओं को भी साहित्यिक और वैचारिक विमर्श का विषय बनाया गया। इस प्रकार आधुनिकता को स्वीकार करने की प्रक्रिया में अपनी सांस्कृतिक जड़ों और पारंपरिक मूल्यों से जुड़े रहने का संतुलित दृष्टिकोण दिखाई देता है। समीर ने साहित्य और पत्रकारिता दोनों माध्यमों का उपयोग करते हुए विशेष रूप से युवाओं में शिक्षा, सामाजिक जागरूकता और आधुनिक चिंतन के प्रति रुचि विकसित करने का प्रयत्न किया। साथ ही उन्होंने सामुदायिक परंपराओं और सांस्कृतिक पहचान के संरक्षण की आवश्यकता को भी महत्व प्रदान किया।

संताली सामाजिक-सांस्कृतिक चेतना में भाषा और लिपि का प्रश्न भी अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। भाषा किसी भी समुदाय की पहचान, स्मृति और सांस्कृतिक निरंतरता का प्रमुख आधार होती है। इसी कारण संताली समाज के लिए अपनी भाषा के स्वतंत्र स्वरूप तथा उसके लेखन के लिए विशिष्ट लिपि की आवश्यकता केवल भाषायी विषय नहीं रही, बल्कि वह सांस्कृतिक अस्मिता और स्वायत्त पहचान से भी जुड़ गई। रघुनाथ मुर्मू द्वारा विकसित ओल चिकी लिपि ने संताली भाषा को स्वतंत्र लिखित अभिव्यक्ति प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इसके माध्यम से संताली भाषा को एक विशिष्ट लिपिगत पहचान प्राप्त हुई और उसके साहित्यिक विकास की संभावनाएँ अधिक व्यापक हुईं। ओल चिकी के प्रचार-प्रसार तथा संताली भाषा की सामाजिक और संवैधानिक मान्यता के लिए किए गए प्रयासों ने भाषा के प्रश्न को व्यापक सांस्कृतिक आंदोलन में परिवर्तित कर दिया। भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में संताली भाषा का समावेश इस दीर्घकालीन भाषायी संघर्ष और सांस्कृतिक चेतना की महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में देखा जा सकता है।

समीर युगीन तथा उसके बाद के संताली साहित्य में गरीबी, सामाजिक विषमता, अन्याय, भेदभाव, आर्थिक शोषण, सांस्कृतिक प्रभुत्व और आदिवासी अधिकार जैसे प्रश्न भी निरंतर अभिव्यक्त होते रहे हैं। इन विषयों के माध्यम से साहित्यकारों ने न केवल समाज की वास्तविक परिस्थितियों को सामने रखा, बल्कि परिवर्तन और न्याय की आवश्यकता को भी रेखांकित किया। साहित्य में उपस्थित यह चेतना समुदाय के भीतर आत्मसम्मान, अधिकार-बोध और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना को मजबूत करने का माध्यम बनी। इस प्रकार समीर युगीन संताली साहित्य में एक ओर शिक्षा, सामाजिक सुधार और आधुनिक विचारधारा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण दिखाई देता है, वहीं दूसरी ओर भाषा, लोकपरंपरा, सांस्कृतिक विरासत और सामुदायिक अस्मिता के संरक्षण का आग्रह भी समान रूप से उपस्थित है। आधुनिकता और परंपरा के बीच स्थापित यही संतुलन, संघर्ष और समन्वय समीर युगीन संताली साहित्य की सामाजिक-सांस्कृतिक चेतना को विशिष्ट बनाता है। यह साहित्य केवल अपने समय के सामाजिक यथार्थ का प्रतिबिंब नहीं है, बल्कि संताली समुदाय के आत्मबोध, सांस्कृतिक संरक्षण, सामाजिक परिवर्तन और अधिकार-संघर्ष की सशक्त अभिव्यक्ति भी है।

तुलनात्मकविक्षेपण: समानताएं और अंतर

भारतेन्दु युगीन हिन्दी साहित्य तथा समीर युगीन संताली साहित्य का तुलनात्मक अवलोकन करने पर यह तथ्य सामने आता है कि दोनों साहित्यिक धाराएँ अलग-अलग सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक परिस्थितियों में विकसित होने के बावजूद सामाजिक जागरण तथा परिवर्तन की चेतना को प्रमुखता प्रदान करती हैं। दोनों ही साहित्यिक परंपराओं के रचनाकारों ने साहित्य को मात्र मनोरंजन अथवा सौंदर्याभिव्यक्ति का साधन न मानकर उसे समाज की समस्याओं, विसंगतियों और आवश्यकताओं को अभिव्यक्त करने वाले प्रभावशाली माध्यम के रूप में स्वीकार किया। इस दृष्टि से दोनों साहित्यिक युगों में साहित्य सामाजिक चेतना के निर्माण और जनजागरण की महत्वपूर्ण भूमिका निभाता दिखाई देता है।

सामाजिक सुधार के संदर्भ में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और उनके समकालीन साहित्यकारों ने बाल-विवाह, जातिगत भेदभाव, छुआछूत, रूढ़िवाद,

स्त्री-शिक्षा के अभाव तथा धार्मिक आडंबर जैसी सामाजिक समस्याओं को अपनी रचनाओं में स्थान दिया। उनके साहित्य में तत्कालीन समाज की कुरीतियों के प्रति असंतोष के साथ-साथ सुधार की आकांक्षा भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। दूसरी ओर, संताली साहित्य में भी सामाजिक सुधार और आत्मजागरण की प्रवृत्ति महत्वपूर्ण रही। संताली रचनाकारों ने अपने समुदाय के भीतर मौजूद अशिक्षा, मद्यपान, सामाजिक कुरीतियों तथा अन्य आंतरिक समस्याओं को रेखांकित करते हुए समुदाय को जागरूक करने का प्रयास किया। इस प्रकार दोनों साहित्यिक परंपराओं में सामाजिक परिवर्तन को साहित्यिक अभिव्यक्ति का महत्वपूर्ण आधार बनाया गया।

भाषा के विकास तथा साहित्य के प्रसार की दृष्टि से भी दोनों युगों में उल्लेखनीय सक्रियता दिखाई देती है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने पत्रकारिता, पत्र-पत्रिकाओं तथा विभिन्न साहित्यिक माध्यमों के द्वारा हिन्दी भाषा को व्यापक जनसमुदाय तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनके प्रयासों से हिन्दी गद्य, पत्रकारिता और सार्वजनिक विमर्श को नई गति प्राप्त हुई। इसी प्रकार समीर के साहित्यिक एवं पत्रकारिता संबंधी प्रयासों ने संताली भाषा में विचारों के संप्रेषण और साहित्यिक गतिविधियों के विस्तार को प्रोत्साहित किया। इस प्रकार दोनों साहित्यिक धाराओं में भाषा को केवल संप्रेषण का माध्यम न मानकर सामाजिक और सांस्कृतिक जागरण के साधन के रूप में देखा गया।

बाहरी शोषण तथा सांस्कृतिक दबाव के प्रति प्रतिरोध की दृष्टि से भी दोनों साहित्यिक परंपराओं में महत्वपूर्ण समानताएँ दिखाई देती हैं। भारतेन्दु युगीन साहित्य में औपनिवेशिक शासन के राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रभावों के प्रति असंतोष तथा प्रतिरोध की भावना विकसित हुई। विदेशी शासन की आर्थिक नीतियों, सामाजिक प्रभावों और सांस्कृतिक वर्चस्व को लेकर साहित्यकारों ने अपनी चिंताएँ अभिव्यक्त कीं। इसके विपरीत संताली साहित्य में प्रतिरोध की चेतना मुख्यतः भूमि, प्राकृतिक संसाधनों, सामाजिक अधिकारों, सांस्कृतिक अस्तित्व और सामुदायिक स्वायत्तता से जुड़े प्रश्नों के माध्यम से सामने आती है। इसलिए दोनों साहित्यिक धाराओं में शोषण और वर्चस्व के विरुद्ध आवाज तो दिखाई देती है, किंतु उसके संदर्भ और अनुभव अलग-अलग हैं।

फिर भी दोनों युगों की सामाजिक चेतना को पूरी तरह एक समान मानना उचित नहीं होगा। भारतेन्दु युगीन साहित्य का विकास व्यापक भारतीय सामाजिक परिवेश तथा उभरती हुई राष्ट्रीय चेतना के संदर्भ में हुआ। इस साहित्य में राष्ट्र, समाज, भाषा, संस्कृति और सामाजिक सुधार जैसे प्रश्न अपेक्षाकृत व्यापक भारतीय परिप्रेक्ष्य में उपस्थित होते हैं। इसके विपरीत समीर युगीन संताली साहित्य का केंद्र आदिवासी समाज की विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान, सामुदायिक जीवन, भूमि-अधिकार, भाषायी अस्मिता और सांस्कृतिक संरक्षण से अधिक निकटता से जुड़ा रहा। संताली साहित्य में समुदाय के अस्तित्व और उसकी विशिष्ट पहचान की रक्षा का प्रश्न साहित्यिक चेतना का प्रमुख आधार बनता है।

भाषा और लिपि के प्रश्न को लेकर भी दोनों साहित्यिक परंपराओं में महत्वपूर्ण अंतर दिखाई देता है। हिन्दी के साहित्यिक विकास के साथ देवनागरी लिपि का स्थान क्रमशः सुदृढ़ होता गया और हिन्दी को आधुनिक साहित्यिक तथा पत्रकारिता की भाषा के रूप में व्यापक आधार प्राप्त हुआ। इसके विपरीत संताली समाज में भाषा और लिपि का प्रश्न केवल साहित्यिक विकास तक सीमित नहीं रहा, बल्कि वह सांस्कृतिक पहचान और भाषायी स्वायत्तता से भी गहराई से जुड़ा रहा। इसलिए संताली साहित्य में भाषा की रक्षा और उसके स्वतंत्र स्वरूप को बनाए रखने की आकांक्षा सांस्कृतिक अस्तित्व के प्रश्न के साथ जुड़ती हुई दिखाई देती है।

साहित्यिक विधाओं के विकास की दृष्टि से भी दोनों की यात्रा में पर्याप्त भिन्नता रही। भारतेन्दु युग में नाटक, निबंध, पत्रकारिता, आलोचना तथा आधुनिक हिन्दी गद्य की विभिन्न विधाओं का उल्लेखनीय विस्तार हुआ। इन विधाओं ने सामाजिक और राजनीतिक विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए नए अवसर प्रदान किए। दूसरी ओर, संताली साहित्य का विकास अपनी समृद्ध मौखिक परंपरा से गहरे रूप में जुड़ा रहा। लोकगीत, लोककथाएँ, काव्य, कथा-साहित्य और पत्रकारिता ने संताली समाज की सामूहिक स्मृतियों, अनुभवों और सांस्कृतिक मूल्यों को अभिव्यक्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस प्रकार दोनों साहित्यिक परंपराओं में विधागत विकास की दिशा अलग होने के बावजूद साहित्य सामाजिक अनुभवों के संरक्षण और संप्रेषण का माध्यम बना।

निष्कर्ष

भारतेन्दु युगीन हिन्दी साहित्य तथा समीर युगीन संताली साहित्य के तुलनात्मक विश्लेषण से यह तथ्य उभरकर सामने आता है कि साहित्य केवल अपने समय के सामाजिक जीवन, सांस्कृतिक मान्यताओं और सामूहिक अनुभवों का प्रतिबिंब प्रस्तुत करने तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह समाज में परिवर्तन की चेतना विकसित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यद्यपि दोनों साहित्यिक धाराओं का उद्भव भिन्न ऐतिहासिक, सामाजिक एवं भाषायी परिस्थितियों में हुआ, तथापि दोनों में सामाजिक समस्याओं की पहचान, जनचेतना के विस्तार तथा सांस्कृतिक अस्मिता के संरक्षण की समान प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तथा उनके समकालीन साहित्यकारों ने हिन्दी साहित्य को राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक सुधार, भाषा-जागरण और सांस्कृतिक स्वाभिमान के प्रश्नों से संबद्ध किया। इसके विपरीत डॉ. समीर, रघुनाथ मुर्मू तथा अन्य संताली साहित्यकारों ने आदिवासी समाज के जीवनानुभवों,

सामुदायिक अधिकारों, भाषा-संरक्षण, पारंपरिक मूल्यों, भूमि-अधिकार तथा सांस्कृतिक पहचान जैसे विषयों को साहित्यिक विमर्श का प्रमुख आधार बनाया। इस प्रकार दोनों साहित्यिक परंपराओं में सामाजिक सरोकार समान रूप से उपस्थित हैं, किंतु उनकी अभिव्यक्ति संबंधित समुदायों की विशिष्ट सामाजिक एवं ऐतिहासिक परिस्थितियों के अनुरूप भिन्न रूप ग्रहण करती है।

औपनिवेशिक प्रभाव भी दोनों साहित्यिक परंपराओं के विकास को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तत्व रहा। हालांकि, अलग-अलग सामाजिक अनुभवों और परिस्थितियों के कारण औपनिवेशिक हस्तक्षेप के प्रति दोनों साहित्यिक धाराओं की प्रतिक्रियाएँ एक समान नहीं रहीं। भारतेन्दु युगीन हिन्दी साहित्य में औपनिवेशिक शासन की पृष्ठभूमि में राष्ट्रीय भावना, सामाजिक जागरण और सुधारवादी चेतना का स्वर अपेक्षाकृत अधिक मुखर दिखाई देता है। वहीं संताली साहित्य में बाहरी हस्तक्षेप के साथ भूमि से बेदखली, प्राकृतिक संसाधनों पर सामुदायिक अधिकार, भाषायी स्वतंत्रता तथा सांस्कृतिक अस्तित्व की रक्षा जैसे प्रश्न विशेष महत्व प्राप्त करते हैं। इस भिन्नता से स्पष्ट होता है कि साहित्यिक चेतना किसी एक निश्चित या सार्वभौमिक रूप में विकसित नहीं होती, बल्कि प्रत्येक समाज की ऐतिहासिक परिस्थितियों, सामाजिक आवश्यकताओं और सामूहिक स्मृतियों के आधार पर उसका स्वरूप निर्धारित होता है।

भारतेन्दु युग और समीर युग का तुलनात्मक अध्ययन इस निष्कर्ष को पुष्ट करता है कि साहित्य सामाजिक विषमता, संकट और अन्याय को अभिव्यक्त करने के साथ-साथ समुदाय को अपनी सांस्कृतिक पहचान के प्रति सजग बनाने तथा अधिक न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की आकांक्षा को स्वर प्रदान करने वाला सशक्त माध्यम है। दोनों साहित्यिक परंपराओं में साहित्यकारों ने अपने समाज की वास्तविकताओं को रचनात्मक अभिव्यक्ति देकर व्यापक सामाजिक चेतना के निर्माण में योगदान दिया है। इस दृष्टि से साहित्य केवल सौंदर्यबोध या मनोरंजन का माध्यम न होकर सामाजिक संवाद, प्रतिरोध और परिवर्तन का प्रभावी साधन भी बन जाता है।

भविष्य में इन दोनों साहित्यिक परंपराओं के तुलनात्मक अध्ययन को समकालीन पर्यावरणीय संकट, लैंगिक समानता, सामाजिक न्याय, वैश्वीकरण, विस्थापन तथा आदिवासी अधिकारों जैसे उभरते विमर्शों से जोड़कर देखा जा सकता है। ऐसा अध्ययन तुलनात्मक साहित्य की सीमाओं को विस्तृत करने के साथ-साथ यह समझने में भी सहायता करेगा कि विभिन्न सामाजिक एवं सांस्कृतिक समुदाय आधुनिक परिवर्तनों का सामना किस प्रकार करते हैं और साहित्य के माध्यम से अपनी अस्मिता, अधिकारों तथा सामूहिक आकांक्षाओं को किस प्रकार अभिव्यक्त करते हैं। इस प्रकार भारतेन्दु युगीन हिन्दी और समीर युगीन संताली साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन भारतीय साहित्य में विविधता, सामाजिक चेतना और सांस्कृतिक प्रतिरोध की अंतर्धाराओं को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है।

संदर्भग्रन्थ सूची

1. कैरिन, मरीन। (2022)। सैंटलइंडिजिनसनाँलेज, कल्चरलहेरिटेज, एंड द पॉलिटिक्सऑफरिप्रेजेंटेशन। *मॉडर्नएशियनस्टडीज़*, 56(5), 1438–1463।
2. चोक्सी, एन. (2017)। फ्रॉमलैंग्वेजटूस्क्रिप्ट: ग्राफिकप्रैक्टिसएंड द पॉलिटिक्सऑफअथॉरिटीइनसंताली-लैंग्वेजप्रिंटमीडिया, ईस्टर्नइंडिया। *मॉडर्नएशियनस्टडीज़*, 51(5), 1519–1560।
3. चौधरे, श्वेताबी. (2022)। ट्राइबललाइफएंडलिटरेचरऑफइंडिया: विदरेफरेंसटूसंतालीलाइफइन द हिंदीपोएट्रीऑफनिर्मलापुतुल। *जर्नलऑफइंटरडिसिप्लिनरीसाइकिलरिसर्च*, 14(3), 139–143।
4. जोसेलिन, सी. जे., एवंप्रेमकुमार, के. (2025)। इकोज़फ्रॉम द फॉरेस्ट: द अनब्रेकबलस्फिरिटऑफआदिवासीवूमेनइननिर्मलापुतुलसपोएट्री। *शानलैक्सइंटरनेशनलजर्नलऑफआर्ट्स, साइंसएंडह्यूमैनिटीज*, 12(S3), 53–56।
5. खान, नाज़नीन। (2025)। इंडियनट्राइबललिटरेचर: एनओवरव्यू। *द क्रिएटिवलॉन्चर*, 10(4), 66–74।
6. मिश्र, प्रमोदकुमार। (2014)। भारतेन्दुयुगीनकविताओंमेंसांस्कृतिकचेतना। *आजकल*, सितंबर 2014। प्रकाशनविभाग, भारतसरकार।
7. मुर्मू, रघुनाथ। (1942)। *बिंदु-चंदन* [संतालीनाटक]।
8. मुर्मू, रघुनाथ। (1944)। *खेरवालबीर* [संतालीनाटक; ओडियासंस्करण]।
9. पिवहरे, राजेन्द्रकुमार। (2025)। विकसितभारतमेंसाहित्यकीभूमिकाएवंयोगदान: एकअध्ययन। *जर्नलऑफएडवांसेडस्कॉलर्लीरिसर्चसइनअलाइडएजुकेशन*, 22(3), 392–401।
10. रांखौल, महारानी। (2025)। आदिवासीहिंदीकवयित्रियोंकासृजनसंसार: सुशीलासामदसेजसिंताकेरेकेट्टातक। *इंटरनेशनलजर्नलफॉररिसर्चटेक्नोलॉजीएंडसेमिनार*, 28(3), 104–123।

11. सोनकर, एस. के., एवं आनंद, ए. (2025)। ट्राइबलफेमिनिज़्म इन द पोएम्सऑफनिर्मलापुतुल। *द क्रिएटिवलॉन्चर*, 10(4), 28–35।
12. ओकेन्द्र, ओ. (2019)। आधुनिकहिन्दीगद्यसाहित्यमें 'भारतेन्दु-युग': ए कम्परेटिवस्टडीऑफभारतेन्दुएराइनमॉडर्नहिंदीप्रोज़लिटरेचर। *जर्नलऑफएडवांसेसएंडस्कॉलर्लीरिसर्चेंसइनअलाइडएजुकेशन*, 16(5), 44–53।
13. भारतेन्दुहरिश्चन्द्र. *भारत-दुर्दशा*. विभिन्नसंस्करण।
14. भारतेन्दुहरिश्चन्द्र. *अंधेरनगरी*. विभिन्नसंस्करण।

COPYRIGHT:

© 2026 The Author(s). This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC-BY 4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited. See <http://creativecommons.org/licenses/by/4.0/>